24

णिजन्त प्रकरण

पूर्व में आपने दस गणों की धातुओं का परिचय प्राप्त किया है। अभी णिजन्त प्रकरण का आरम्भ किया जा रहा है। 'णिच्' यह एक प्रत्यय है। 'णिच्' जिसके अन्त में होता है वह शब्द णिजन्त कहलाता है। णिच् प्रत्यय दो प्रकार का होता है। जो चुरादिगणीय धातुओं से जो णिच् प्रत्यय होता है वह तो प्रकृति (धातु) के अर्थ को ही परिपोषित करता है, अतः इस कारण से स्वार्थिक होता है।

अनिर्दिष्ट अर्थ वाले प्रत्यय स्वार्थ में होते है परिभाषा बल के कारण। यह प्रथम प्रकार का णिच् प्रत्यय हुआ। दूसरा - दसगणीय धातुओं से प्रेरणा (कराना) अर्थ में भी णिच् प्रत्यय होता है। वह ही यहाँ आलोचना का विषय है। जैसे - हिन्दी भाषा में पढ़ना - पढ़ाना, लिखना - लिखाना खाना - खिलाना पीना -पिलाना इत्यादि प्रयोग होते हैं वैसे ही संस्कृत में भी खादति - खादयति, लिखति - लेखयति, पिबति - पाययति इत्यादि प्रयोग होते हैं। यहाँ दस गणों की धातुओं से णिच् प्रत्यय करके प्रेरणावाचक नवीन धातुओं धातु का निर्माण होता है। यथा पठ् - धातु का हिन्दी मे अर्थ है पढ़ना, इस धातु से णिच् प्रत्यय करने पर 'पाठि' यह नवीन धातु होती है, उसका हिन्दी अर्थ पढ़ाना होता है तथा 'पाठयति' यह रूप होता है। णिचश्च (१.३.७४) इसके योग से कर्तृगामी क्रियाफल में आत्मनेपद और अकर्तृऽभिप्राय होने पर शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् (९.३.६७) इससे परस्मैपद होता है। यद्यपि कही अकर्तृऽभिप्राय होने पर क्रियाफल में भी आत्मनेपद होता है यथा भीस्म्योर्हेतुभये (१.३.६८) यहाँ। पाठयति यहाँ मूल 'पठ्' इसकी भूवदयो धातवः (१.३.१) इस सूत्र से धातुसंज्ञा होती है। पठि इस णिजन्त की तो सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) इससे धातुसंज्ञा होती है, यह जानना चाहिए। व्याकरणशास्त्र को सोपान क्रम से पढ़ना चाहिए। इस कारण से ही प्रकरण के लिए भ्वादि प्रकरणादि का ज्ञान आवश्यक है। अतः पूर्व में पढ़े गए पाठों का ज्ञान धारण करके अग्रिम पाठ पढ़ने चाहिए।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- णिच् प्रत्यय का क्या अर्थ होता है तथा प्रयोग को जान पाने में;
- णिच् प्रत्यय विधायक सूत्र के अर्थ का ज्ञान प्राप्त करने में;
- णिच् प्रत्ययान्त रूपों की प्रक्रिया का ज्ञान प्राप्त करने में;
- उन-उन स्थलों में (स्थिति अनुसार) विशेष सूत्रों का ज्ञान प्राप्त करने में;
- णिजन्त पदों को प्रयोग करने का सामर्थ्य प्राप्त करने में।

वाक्य में विविध कारक होते हैं। परन्तु जिसके बिना क्रिया की सिद्धि नहीं होती है वह कर्ता कारक कहलाता है, यह आपके द्वारा कारक - प्रकरणों में पढ़ा गया है, यह विचार करता हूं। जैसे 'रामः पठति' इस वाक्य में पठन क्रिया की सिद्धि राम के विना सम्भव नहीं है। क्रिया में कर्ता ही स्वतन्त्र रूप से विवक्षित होता है। कर्म आदि कारक तो कर्ता की अपेक्षा होने से स्वतन्त्र होने में योग्य नहीं है। जैसे - क्रिया के द्वारा कर्ता के इष्टतम की कर्म संज्ञा, क्रिया में कर्ता के प्रकृष्ट रूप से उपकारक की करण संज्ञा, दान आदि क्रिया के द्वारा कर्ता के अभिप्रेत की सम्प्रदान संज्ञा, कर्ता की अवधि की अपादान संज्ञा, कर्ता के आधार की अधिकरण संज्ञा होती है। इस प्रकार सभी कारकों मे कर्ता विवक्षित होता है। कर्ता तो किसी का भी अधीन नहीं है। अतः स्वतन्त्र रूप से विवक्षित कारक की कर्तृसंज्ञा होती स्वतन्त्रः कर्ता (इस सूत्र के योग से) इस प्रकार से ही कर्ता के प्रेरक की कर्तृसंज्ञा एवं हेतुसंज्ञा का विधान करने के लिए अग्रिम सूत्र का आरम्भ करते हैं।

24.1 तत्प्रयोजको हेतुश्च - (१। ४। ५५)

सूत्रार्थ - कर्ता का प्रयोजक, **हेतुसंज्ञक** और **कर्तृ संज्ञक** हो।

सूत्रव्याख्या - यह संज्ञा सूत्र तीन पदों का है। तत्प्रयोजकः (१। १) हेतुः (१। १) च अव्यय इस प्रकार सूत्रान्तर्गत पदों का विच्छेद है। तत् पद से कर्तृ (कर्ता) पद का ग्रहण किया गया है जो स्वतन्त्रः कर्ता (१.४.५४) इस पूर्व सूत्र से लिया गया है। तस्य = कर्तुः प्रयोजकः तत्प्रयोजकः यहां षष्ठीतत्पुरुष समास है। जो प्रेरित करता है वह प्रयोजक, प्रेरक अथवा प्रवर्तित कहलाता है। जो प्रेरित होता है वह प्रयोज्य, प्रेरित अथवा प्रवर्तित कहलाता है। जैसे - यज्ञदत्तो देवदत्तेन ओदनं पाचयाते (यज्ञदत्त देवदत्त के द्वारा भात पकवाता है। यहाँ पाक क्रिया में यज्ञदत्त के द्वारा देवदत्त प्रेरित होता है अतः वह प्रयोज्य कहलाता है, यजदत्त तो प्रेरित करता है अतः स वह प्रयोजक कहलाता है। इस प्रयोजक की ही कर्तृसंज्ञा और हेतुसंज्ञा का विधान इस सूत्र के द्वारा किया जाता है। हेतु संज्ञा का फल - हेतुमति च (३। १। २६) सूत्र से प्रयोजक के व्यापार में णिच् प्रत्यय की सिद्धि होना। कर्तृ संज्ञा का फल - "लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः" इस सूत्र से कर्ता

में लङ् आदि की सिद्धि। इस प्रकार कर्ता के प्रयोजक की हेतुसंज्ञा और कर्तृसंज्ञा होती है। यह सूत्र अर्थ प्राप्त होता है।

यहां विशेष (बिन्दु) णिजन्त स्थल में प्रयोजक कर्ता और प्रयोज्य कर्ता दो प्रकार का कर्ता होता है। व्यापारवान् कर्ता प्रयोज्य कर्ता होता है और प्रेरक कर्ता प्रयोज्य कर्ता होता है। देवदत्तः पचति। (देवदत्त पकाता है। तं यज्ञदत्तं प्रेरयति (उसको यज्ञदत्त प्रेरित करता है) – यहाँ पच् धातु का अर्थ है – पाक अनुकूल व्यापार और वह व्यापार देवदत्त में है। अतः देवदत्त पाक के अनुकूल व्यापार करने वाला है, अतः वह कर्ता होता है किन्तु णिजन्त स्थल पर वह प्रयोज्य कर्ता होता है यज्ञदत्त में तो उस प्रकार का व्यापार नहीं है, अतः वह कर्ता होने के योग्य नहीं है। इसलिए 'तत्प्रयोजको हेतुश्च' इस सूत्र से यज्ञदत्त की हेतुसंज्ञा के साथ कर्तृसंज्ञा का भी विधान होता है। अतः णिजन्तस्थल पर वह कर्ता प्रयोजक कर्ता कहलाता है। हेतु संज्ञा का फल 'भियो हेतुभये षुक्' इत्यादि की प्रवृत्ति है। कर्तृसंज्ञा का फल तो प्रयोजक वाच्य होने पर 'लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः' (३.४.६९) इस सूत्र से कर्ता (अर्थ) में लकार का विधान करना है। अभी हेतुसंज्ञा का फल प्रदर्शित करते है।

24.2 हेतुमति च (३.१.२६)

सूत्रार्थ – प्रयोजक व्यापार में प्रेषणादि वाच्य होने पर धातु से णिच् प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों वाला है। हेतुमति – ७/१, च – अव्यय इस प्रकार **सूत्रगत** पदों का विच्छेद है। हेतु (प्रयोजक) मूल रूप से अस्य अस्ति से मतुप् प्रत्यय करने पर हेतुमान्, सप्तमी विभक्ति में 'हेतुमति' 'धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहा'यङ्' (३.१.२२) सूत्र से धातोः सत्यापपणिच् (३.१.२५) तक णिच् पद का अनुवर्तन होता है। प्रत्यय और परे दोनों को अधिकृत कर लिया है हेतुमत् – शब्द से हेतु का (प्रयोजक का) व्यापार अभिप्रेत है। और वह व्यापार प्रेरणादि है। और इसी प्रकार प्रयोजक कर्ता का प्रेरणादि व्यापार वाच्य में होने पर धातु से णिच् प्रत्यय होता है यह सूत्र का अर्थ सम्पादित होता है। णिच् का णकार और चकार इत्संज्ञक होता है। अतः इकार मात्र ही शेष रहता है। इस सूत्र से णिच् प्रत्यय का विधान होता है।

यहाँ विशेष बिन्दु –

वस्तुतः भ्वादिगण से चुरादिगण के अन्तर्गत जो धातु उनसे णिजन्तधातु पृथक् नहीं है अपि तु उनसे ही णिच् प्रत्यय करने पर नवीन शब्द स्वरूप को प्राप्त करते हैं। इसलिए वे ही णिजन्त कहलाते हैं। णिजन्तधातु का णिचश्च (९.३.७४) इस सूत्र से उभयपद विधान होता है।

उदाहरण – भावयति

सूत्रार्थसमन्वय – भवन्तं प्रेरयति (प्रेरित करती है) इस अर्थ में भू धातु से णिच् प्रत्यय होने पर, णिच् में अनुबन्ध लोप होने पर 'भू इ' होने पर णिचः णित्वात् अचोञ्णिति (७.२.११५) इस सूत्र से अजन्त में लक्षण वृद्धि होने से औकार होने पर 'एचोऽयवायावः' (६.१.७५) इस सूत्र से आव्

टिप्पणियाँ

आदेश होने और वर्णसम्मेलन होने पर 'भावि' यह बनता है। और उस समुदाय की 'सनाद्यन्ता धातवः' (३.१.३२) इस सूत्र से धातुसंज्ञा और कर्तृत्व विवक्षा होने पर वर्तमाने लट् (३.२.१२३) सूत्र से 'लटि भावि ल्' यह स्थिति उत्पन्न होती है। इसके पश्चात् प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा मंत णिचश्च (१.३.७४१) सूत्र से परस्मैपद आत्मनेपद दोनों की युगपद प्राप्ति होने पर क्रियाफल के परगामी होने पर शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् (१.३.७५) इस सूत्र से परस्मैपद का विधान होने पर तिप् तस् (3.४.७८) सूत्र के योग से 'ल' के स्थान पर परस्मैपदसंज्ञक तिबादि नौ प्रत्यय प्राप्त होने पर प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा होने पर 'तिप्' हुआ, तिप् में अनुबन्ध लोप होने पर 'भावि ति' इस स्थिति में कर्तरि शप् (३.१.६८) इस सूत्र से शप् होकर अनुबन्ध लोप होने पर 'भावि अ ति' होने पर शप् के शित्व होने से तिङ् शित् सार्वधातुकम् (३.४.११३) इस सूत्र से सार्वधातुक संज्ञा होने पर सार्वधातुकार्धधातुकयोः (७.४.८४) इस सूत्र से इगन्त अङ्गसंज्ञक 'भावि' इसके इकार का गुण एकार होने पर एचोऽयवायावः (६.१.७८) इस सूत्र से एकार के स्थान पर अयादेश होने पर 'भाव् अय् अति' होने पर 'भावयति' यह रूप सिद्ध होता है। कर्तृगामी क्रिया फल में तो आत्मनेपद प्रत्यय होता है। उससे 'भावयते' यह रूप भी होता है। इस प्रकार णिजन्तस्थल पर दो प्रकार का रूप होता है, यह सम्यक् रूप से समझना चाहिए।

अब आपको अपने सम्यक् रूप से बोध के लिए प्रत्येक लकार में एक एक उदाहरण नीचे प्रदर्शित करते है –

लिट् लकार में – भावयाञ्चकार – भावयाञ्चक्रे। भवयामास। भावयाम्बभूव।

लुट् लकार में – (परस्मैपद) भावयिता, भावयितारौ, भावयितारः। भावयितसि (आत्मनेपद), भावयिता, भावयितारौ, भावयितारः। भावयितासे।

लृट् लकार में – (परस्मै)। भावयिष्यति। (आत्मने) भावयिष्यते।

लोट् लकार में – (परस्मै) भावयतु – भावयतात्। (आत्मने) अभावयत।

विधिलिङ् लकार में – (परस्मै) भावयेत्। (आत्मने) भावयेत

आशीर्लिङ् में – (परस्मै) भाव्यात्। (आत्मने) भावयिषीष्ट

भू धातु से णिच् प्रत्यय होने पर लुङ् लकार में अट् आगम होने पर 'तिपि इतश्च' (३.४.१००) इस सूत्र से तिप् के इकार के लोप तथा 'च्लि' होने पर 'अ भू इ च्लि त्' यह स्थिति होती है। उसके बाद च्लि के स्थान पर सिजादेश प्राप्त होने पर उसको बाध करके 'णिक्षिद्रुसुभ्यः' (३.१.४८) इस सूत्र से ण्यन्तधातु होने से च्लि के स्थान पर चङ् आदेश होकर अनुबन्ध लोप होने पर 'अ भू इ अत्' होने पर णिचश्च आदेशो न द्वित्वे कर्तव्ये इस परिभाषा से चङि (६.१.१) इस सूत्र से 'भू' के द्वित्व होने पर 'पूर्वोऽभ्यासः' (६.१.५) इस सूत्र से पूर्व भाग की अभ्यास संज्ञा होने पर ह्रस्वः (७.४.५१) इस सूत्र से

प्रथम 'भू' के ऊकार का 'ह्रस्वे अभ्यासे चर्च' (८.५.५४) इस सूत्र से जश्त्व होने पर 'अ वु बू इ अत्' यह हुआ। इसके पश्चात् द्वितीय 'भू' के ऊकार का अचो ञ्णिति (७.२.११५) इसके

योग से वृद्धि 'भौ' होने पर 'एचोऽयवायावः' (६.१.७८) सूत्र से आव् आदेश होने पर 'अ बु भाव् इ अत्' हुआ। उसके पश्चात् णौ चङ्युपधायाः ह्रस्वः (७.४.१) इस सूत्र से 'भाव्' इस उपधाभूत आकार का ह्रस्व होने पर 'अ बु भव् इ अ त्' होने पर णेरनिटि (६.४.५१) इस सूत्र से णिच् के इकार का लोप होने पर 'अ बु भव् अ त्' होने पर सन्वल्लघुनि चङ्परेऽनग्लोपे (७.४.१३) सूत्र से सन् वद् भाव होने पर अग्रिम सूत्र आरम्भ किया जाता है –

24.3 ओः पुयण्ज्यपरे (३.४.८०)

सूत्रार्थ – सन् परे रहते जो अङ्ग है, उसके अवयव अभ्यास के उकार का इत् हो ,पवर्ग–यण्–जकार, अवर्ण परे रहते।

सूत्रव्याख्या – वह विधिसूत्र तीन पदों का है। ओः (६/१) पुयण्जि (७/१), अपरे (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। 'पुश्च (पवर्गश्च) यण् च ज् च पुण्यज' इस प्रकार समाहार द्वन्द्व है, सप्तमी में अपरे। यहाँ लोपोऽभ्यासस्य (७.४.५८) यहाँ से 'अभ्यासस्य' इस पद की, भृञामित् (७.४.७६) यहाँ से इत् इस पद की, सन्यतः (७.४.७९) यहाँ से 'सनि' इस पद की अनुवृत्ति होती है। अङ्गस्य (६.४.१) यह अङ्ग 'पुयण्जि' इस विशेष्य का अपरे विशेषण है। ऊकार का षष्ठ्यन्त रूप 'ओः' होता है। इत् इसका अर्थ ह्रस्व इकार है। और सन् परे होने पर जो अङ्ग होता है, उस अवयव अभ्यास ऊकार के स्थान में इकारादेशः हो पवर्ग, यण्, जकार, अवर्ण, परे होने पर। इस सूत्र से इत्व का विधान किया जाता है।

उदाहरणम् – अबीभवत्

सूत्रार्थ समन्वय – तथा 'च अ बु भव् अ त्' होने पर 'ओः पुयण्ज्यपरे' इस प्रकृत सूत्र से 'बु' इसके उकार का इत्व होता है। क्योंकि, यहा अभ्यास में स्थित ऊकार है। और भकार पवर्गीय वर्ण अकार परक है। और यहा अङ्ग सन् परक भी है। तत्पश्चात् दीर्घो लघोः (७.४.९४) इस सूत्र से बि के इकार का दीर्घ होने पर सर्व वर्ण सम्मेलन होने पर 'अबीभवत्' यह रूप सिद्ध होता है। इस सूत्र के अन्य उदाहरण दूसरे ग्रन्थ में देखें।

पाठगत प्रश्न 24.1

1. क्या कर्ता के प्रयोजक की कर्ता संज्ञा होती है?
2. हेतुसंज्ञा किसकी होती है?
3. णिच् प्रत्यय किस अर्थ में होता है?
4. क्या स्वार्थ में णिच् प्रत्यय होता है?
5. हेतुमति च (३.१.२६) सूत्र से हेतुमत् शब्द से क्या विवक्षित है?
6. 'ओः पुयण्ज्यपरे' सूत्र के योग का क्या अर्थ है?
7. ओः पुयण्ज्यपरे सूत्र का क्या उदाहरण है?

टिप्पणियाँ

24.4 अतिह्रीव्लीरीक्नूयीक्ष्माय्याताम् पुग्णौ॥ (७.३.३६)

सूत्रार्थ – ऋ, ह्री, व्ली, री, क्नूयी, क्ष्मायी इन धातुओं से और आकारान्त धातुओं से पुगागम होता है, णिच् परे रहते।

सूत्रव्याख्या – यह तीन पदों का विधि सूत्र है। अति (६/३), पुक् – ११, णौ (७/१) यह सूत्रान्तर्गत पदों का विच्छेद है। 'अतिश्च ह्रीश्च प्लीश्च रीश्च क्नूयीश्च क्ष्मायीश्च आच्य, इनका इतरेतरयोग द्वन्द्व होने पर अतिह्रीप्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यात:, उनका (षष्ठी विभक्ति होने पर अतिह्रीप्लीरीक्नूयीक्ष्माय्याताम्। द्वीप्लीरीवनूचीमाय्याताम्। पुक् का ककार इत्संज्ञक है, और उकार उच्चारणार्थक है, अत: 'प्' मात्र शेष रहता है। 'कित्वात्' आद्यन्तौ टकितौ (१.१.४६) इस परिभाषा से पुक् अन्तिम अवयव होता है। अङ्गस्य (६.४.१)। और इस प्रकार सत्र अर्थ हुआ – ऋ, ह्री, व्ली, री, क्नूयी, क्ष्मायी, इन धातुओं से और आकारान्त धातुओं से पुक् आगम होता है णिच् प्रत्यय परे रहते। तथा इस सूत्र के द्वारा पुक् आगम का विधान होता है।

उदाहरण – स्थापयाते

सूत्रार्थ समन्वय – इस प्रकार स्था धातु से णिच् प्रत्यय परे रहते 'स्था इ' होने पर प्रकृत सूत्र से पुक् आगम होता है। क्योंकि 'स्था' धातु आकारान्त धातु है, और उसके पश्चात् णिच् प्रत्यय भी विहित है। तत्पश्चात् पुक् का अनबन्ध लोप होने पर 'स्थापि' होने पर सनाद्यन्ता धातव: (३.१.३२) इस सूत्र से धातुसंज्ञा होने पर क्रमश: लट्, तिप्, शप्, हुआ। शप् होने पर गुण होकर एकार आदेश होकर अयादेश होने पर 'स्थापयति' यह रूप सिद्ध होता है। पक्ष में 'स्थापयते' यह भी होता है। अन्य उदाहरण –

'ऋ' गति अर्थ में – अर्पयति, अर्पयते

ह्री लज्जा अर्थ में – ह्रेपयति, ह्रेपयते

प्ली वरण अर्थ में – व्लेपयति, व्लेपयते

री गते एवं टपकना अर्थ में – रेपयति, रेपयते

क्नूयी शब्द मे और आर्द्र करना – क्नोपयति, क्नोपयते।

नीचे स्था धातु के सभी लकार में उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

लिट् लकार – स्थापयाञ्चकार, स्थापयाञ्चक्रे। स्थापयामास। स्थापयाम्बभूव।

लुट् लकार – (परस्मै) स्थापयिता, स्थापयितारौ स्थापयितार:। स्थापयितासि।

(आत्मने) स्थापयिता, स्थापयिता, स्थापयितार:। स्थापयितासे

लोट् लकार – (परस्मै) स्थापयतु – स्थापयतात्। (आत्मने) स्थापयताम्।

लङ् लकार – (परस्मै) अस्थापयत्। (आत्मने) स्थापयेत्

आशीर्लिङ् – (परस्मै) स्थाप्यात्। (आत्मने) स्थापयिषीष्ट

विधिलिङ् – (परस्मै) स्थापयेत्। (आत्मने) स्थापयेत

लृङ् लकार – (परस्मै) अस्थापयिष्यत्। (आत्मने) अस्थापयिष्यत

स्था धातु से क्रमशः लुङ्, णिच्, पुक् आगम होने पर लुङ् लकार में प्रथम पुरुष एकवचन में तिप् होने पर च्लि, च्लि के स्थान पर चङ्, चङ् में अनुबन्ध लोप, णि का लोप होने पर 'अ स्थाप्' 'अ त्' इस स्थिति में विशेष को दिखाने के लिए इस सूत्र का आरम्भ किया जाता है।

24.5 तिष्ठतेरित् (७.४.५)

लृट् लकार – (परस्मै) स्थापयिष्यति। (आत्मने) स्थापयिष्यते।

सूत्रार्थ – उपधा को इकार आदेश हो चङ् परक णि परे होने पर।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र दो पदों वाला है। तिष्ठतेः (६/१) इत् (९/१) यह सूत्रगत पद – विच्छेद है। णौ चङ्युपधायाः ह्रस्वः (७.४.५९) सूत्र से णौ, चङि उपधायाः इन पदों की अनुवृत्ति होती है। उसके द्वारा चङ् परक णिच् प्रत्यय परे होने पर स्था धातु की उपधा को इकार आदेश होता है यह सूत्र का अर्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण – अतिष्ठिपत्

सूत्रार्थसमन्वय – यथा – 'अ स्थाप् अ त्' यह स्थिति होने पर 'स्थाप्'। यहाँ उपधाभूत आकार के स्थान पर इकार आदेश होने पर 'अ स्थिप् अ त्' यह स्थिति हुइ। तत्पश्चात् चङि (६.१.११) इस सूत्र से स्थिप् के द्वित्व होने पर 'हलादिः शेषः' (७.४.६०) सूत्र के बाधक 'शर्पूर्वाः खयः (७.४.६१) सूत्र के द्वारा थकार शेष होने पर तथा चर्त्व होने पर 'अ ति स्थिप् अ त्' यह स्थिति होने पर 'आदेशप्रत्ययोः' (८.३.५९) इस सूत्र के द्वारा सकार के स्थान पर षकार करने पर 'अतिष्ठिपत्' यह रूप सिद्ध होता है।

ज्ञानार्थक और ज्ञापनार्थक चुरादिगणीय ज्ञप् धातु से कर्तृत्वविवक्षा में 'सत्यापपाशरूपवीणातूल श्लोकसेनापत्योमत्वचवर्गवर्णचूर्णचुरादिभ्यो णिच्' इससे स्वार्थिक णिच् होने पर पुनः 'हेतुमति च' से णिच् होने पर ज्ञप् इ इ हुआ। तत्पश्चात् णेरनिटि (६.४.५१) सूत्र से स्वार्थक णिच् का लोप होने और उपधा वृद्धि होने पर 'ज्ञाप इ' यह हुआ। वहा ज्ञप् मिच्च इस निर्देश से ज्ञप् धातु का मित्व होना अतिदेश होता है। उसके द्वारा ज्ञप् धातु मित् होती है। अब मित् करण फल प्रदर्शित करने के लिए अग्रिम सूत्र का आरंभ करते हैं –

24.6 मितां ह्रस्वः (६.४.९२)

सूत्रार्थ – घट् आदि और ज्ञप् आदि की उपधा का ह्रस्व हो, णिच् परे रहते।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों का है। मिताम् (६/३), ह्रस्वः – (१/१) यह सूत्रगत विच्छेद है।

टिप्पणियाँ

उदुपधाया गोहः (६.४.८९) इससे 'उपधायाः' इस पद का और दोषो णौ (६.४.९०) इससे 'णौ' इस पद की अनुवृत्ति होती है। यहां जो मित् है, वे धातुपाठ में परिगणित हैं। ज्ञापादि और घटादि मित् होते हैं इसलिए धातुपाठ में दिखाई पड़ते हैं। वहां मित्व अतिदेश होता है न कि जिस धातु का भकार इत्संज्ञक हो वह धातु मित् हो। जैसे 'घट चेष्टायाम्' इस धातु में 'घटादयो मितः' इससे मित्व अतिदेश होता है। किञ्च ज्ञप् मिच्च इस कथन से ज्ञप् धातु में मित्व अतिदेश होता है। सूत्र का अर्थ होता है – घटादि और ज्ञपादि की उपधाया का ह्रस्व हो, णिच् परे। मित्व का एक फल तो 'मितां ह्रस्वः' (६.४.९२) यह है। दूसरा तो 'चिण्णमुलोदीर्घोऽन्यतरस्याम्' (६.४.९३) इस सूत्र से विकल्प से दीर्घादेश का विधान होता है। अघाटे – अघाटि इत्यादि।

उदाहरण – घटयति। ज्ञापयति

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार 'ज्ञाप् इ' होने पर मित्व के अतिदेश हाने पर ह्रस्व आदेश होने पर 'ज्ञपि' यह हुआ। तत्पश्चात् 'ज्ञपि' इस समुदाय दी सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) इससे धातुसंज्ञा होने पर लट्, तिप्, शप् होकर गुण होने तथा अयादेश होने पर ज्ञपयति यह रूप होता है। लुङ् लकार में च्लि चङ्, द्वित्व, णि लोप, सन्वद्भाव होने पर 'सन्यतः' इससे इत्व होने पर 'अजिज्ञपत्' यह रूप हुआ।

इस प्रकार 'घटयति' यहाँ भी जानने योग्य है। लुङ् लकार में तो 'दीर्घो लघोः' (७.४.९४) इस सूत्र की प्रवृत्ति होती है। उसके द्वारा 'अजीघटत्/अजीघटत' रूप सिद्ध होता है।

नीचे ज्ञप –धातु के सभी लकारों में उदाहरण प्रदर्शित करते हैं –

लिट् लकार – ज्ञापयाञ्चकार – ज्ञपयाञ्चक्रे। ज्ञापयामास। ज्ञापयाम्बभूव

लुट् लकार – (परस्मे) ज्ञपयिता, ज्ञपयितारौ, ज्ञपयितारः। ज्ञपयितासि।

(आत्मने) ज्ञपयिता, ज्ञपयितारौ, ज्ञपयितारः। ज्ञपयितासे।।

लृट् लकार – (परस्मै) ज्ञपयिष्यति। (आत्मने) ज्ञपयिष्यते।

लोट् लकार – (परस्मै) ज्ञपयतु –ज्ञपयतात् (आत्मने) ज्ञपयताम्।

लङ् लकार – (परस्मै) अज्ञपयत्। (आत्मने) अज्ञपयत।

विधिलिङ् लकार – (परस्मै) ज्ञपयेत् (आत्मने) ज्ञपयेत।

आशीर्लिङ् लकार – (परस्मै) ज्ञप्यात् (आत्मने) ज्ञपयिषीष्ट।

लृङ् लकार – (परस्मै) अज्ञपयिष्यत् (आत्मने) अज्ञपयिष्यत।

लुङ् लकार – (परस्मै) अजिज्ञपत् (आत्मने) अजिज्ञपत।

पाठगत प्रश्न 24.2

1. तिष्ठतेरित् इस सूत्र का क्या अर्थ है?
2. अर्तिह्वीप्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातां पुङ्णौ (७.३.३६) इस सूत्र से क्या विधान किया जाता है?
3. 'घटयति' यहा उपधा का ह्रस्व किस सूत्र से होता है?
4. 'मितां ह्रस्वः' इसका क्या अर्थ है?
5. ज्ञप् धातु से मित्व कैसे होता है।
6. टु ओ श्वि गति वृद्धि धातु से णिच् परे रहते लुङ् परे होने पर क्या होता है?

24.7 णौच संश्चङोः (६.१.३१)

सूत्रार्थ – सन्परक और चङ्परक णि परे रहते श्वि धातु को संप्रसारण होता है विकल्प से।

सूत्रार्थव्याख्या – यह विधिसूत्र तीन पदों का है। णौ – (७/१) च (अव्यय), संश्चङोः (७/२) यह सूत्रगत आए पदों का विच्छेद है। 'सन् च यङ् च संश्चङौ' तयोः संश्चङोः इति इस प्रकार इतरेतरयोगद्वन्द्व समास हुआ। 'विभाषा श्वैः (६.१.३०) इस सूत्र की और ष्यङः सम्प्रसारणम् (६.१.१३) यहाँ से 'सम्प्रसारणम्' इस पद की अनुवृत्ति होती है। और इस प्रकार सन्परक और चङ्परक णिच् होता है यह अर्थ है। अतः सन्परक णि परे रहते अथवा चङ्परक णि परे रहते श्वि धातु का विकल्प से सम्प्रसारण होता है। श्वि धातु का वकार सम्प्रसारणी है, उसका सूत्र से सम्प्रसारण का विधान वैकल्पिक होता है। श्वि धातु का वकार सम्प्रसारणी है, उसका में सम्प्रसारण मे उकार होता है, 'ततः सम्प्रसारणाच्च' (६.१.१०८) इस सूत्र से पूर्वरूप एकादेश होने पर 'शु' हुआ, यह ध्यान योग्य है।

उदाहरण – अशूशवत्।

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार अश्वि इ अ त् इस अवस्था में वृद्धि और सम्प्रसारण दोनों की एक साथ प्राप्ति होने पर 'सम्प्रसारणं तदाश्रयं च कार्यं बलवत्' इस परिभाषा से पूर्व में सम्प्रसारण ही होता है, अतः 'णौ च संश्चङोः' इससे विकल्प से सम्पसारण करने पर 'अ शु इ इ अ त्' होने पर सम्प्रसारणाच्च (६.१.१०८) इससे पूर्वरूप एकादेश होने पर 'अ शु इ अ त्' होने पर 'शु' इसका चङि (६.१.११) रस सूत्र से द्वित्व करने तथा 'दीर्घो लघोः' (७.४.९४) इस सूत्र से अभ्यास के दीर्घ होने पर 'अ शू शु इ अ त्' होने पर द्वितीय 'शु' के उकार की 'अचो ञ्णिति' (७.२.११५) इससे वृद्धि होने पर 'एचोऽयवायावः' (६.१.७८) इस सूत्र से औकार के स्थान पर आव् आदेश होने पर 'अ शू शाव् इ अ त्' होने पर णौ चङ्युपधाया ह्रस्वः (७.४.१) इस से उपधा को ह्रस्व होने पर णेरनिटि (६.४.५१) इससे णि लोप और सभी वर्णों का सम्मेलन करने पर 'अशूशवत्' यह रूप सिद्ध होता है।

टिप्पणियाँ

दिवादिगण की शो तनूकरणे (कम करना) इस धातु से श्यन्तं प्रेरयति (कम करने के लिए प्रेरित करता है) इस अर्थ में हेतुमति च (३.१.२६) इस से णिच् परे रहते धातु के उकार के स्थान पर आदेच उपदेशेऽशिति (६.१.४५) इससे आकार आदेश होने पर 'शा इ' होने पर 'अतिह्वीप्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातां पुङ्णौ' (७.३.३६) इससे पुक् आगम प्राप्त होने पर इस सूत्र का आरम्भ किया जाता है –

24.8 शाच्छासाह्वाव्यावेपां युक्॥ (७.३.३७)

सूत्रार्थ – प्राप्त शो-छो-षो-ह्वे-व्ये- इन धातुओं से और वे तथा पा इन दोनों धातुओं से युगागम होता है, णिच् परे रहते।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र दो पदों का है। शाच्छासाह्वाव्यावेपाम् (६/३), युक्, (१/१) यह सूत्रान्तर्गत आए पदों का विच्छेद है। शाश्च, छाश्च, साश्च, ह्वाश्च, व्याश्च, वेश्च, पाश्च इनका इतरेतरयोग द्वन्द्व होने पर 'शाच्छासाह्वाव्यापेपाः' उनका (षष्ठी विभक्ति में) शाच्छासाह्वाव्यावेपाम्। युक् का ककार इत् संज्ञक है। अतः 'य्' ही शेष रहता है। कित्व होनेसे आद्यन्तौ टकितौ (१.१.४६) इस परिभाषा से अन्त्य अवयव होता है, यह याद रखना चाहिए। तथा इस सूत्र के द्वारा युक् आगम का विधान होता है। यह सूत्र अर्तिह्वीप्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातां पुङ्णौ (७.३.३६) इस सूत्र का अपवाद है।

उदाहरण – शाययति, शाययते।

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार 'शा इ' इस अवस्था में प्रकृत सूत्र से युक् व अनुबन्ध लोप होने पर 'शाय इ' होने पर समुदाय की सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) इस सूत्र से धातु संज्ञा होने पर लट् लकार प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा में क्रमशः तिप्, शप्, गुण, एकार, अय् आदेश होने पर शाययति, त प्रत्यय होने पर तो शाययते इस प्रकार दो रूप होता हैं।

भ्वादिगण में आयी हुई ओदितः ओ वै शोषणे। (इस धातु से वायन्तं प्रेरयति) इस अर्थ में णिच् परे रहते 'आदेच् उपदेशेऽशिति' (६.१.४५) इस सूत्र से आत्त्व होने पर 'वा इ' स्थिति होने पर 'अर्तिह्वीप्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातां पुङ्णौ (७.३.३६) इसके योग से पुक् आगम प्राप्त होने पर यह सूत्र आरम्भ किया जाता है –

24.9 वो विधूनने युक्॥ (७.३.३८)

सूत्रार्थ – वात जुक् हो णि परे कम्पन अर्थ में।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र तीन पदों का है। वः (६/१), विधूनने (७/१) जुक् (१/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। इस सूत्र में अर्तिह्वी. इसके योग से णौ' इस पद की अनुवृत्ति होती है। औ वै शोषणे वस धातु के ऐकार के स्थान पर आत्व होकर वा होने पर उसका षष्ठी-एकवचनान्त रूप 'वः' यह हुआ।

जुक् का ककार इत्संज्ञक है तथा उकार उच्चारणार्थ है, अतः 'ज्' मात्र शेष रहता है। 'अतिह्री' इस सूत्र के योग का अपवादभूत यह योग है। विधूननम् अर्थात् कम्पन। इस प्रकार कम्प अर्थ में वै धातु से जुगागम होता है, णिच् प्रत्यय परे रहते। यह सूत्रार्थ फलित होता है। इस सूत्र से जुक् आगम का विधान होता है।

उदाहरण - वाजयति, वाजयते।

सूत्रार्थसमन्वय - इस प्रकार वायन्तं प्रेरयति इस अर्थ में 'वै' धातु के ऐकार के स्थान पर आत्व होने पर प्राप्त पुक् आगम को बाध करके 'वो विधूनने जुक्' इस सूत्र से जक् आगम होने और अनुबन्ध लोप होने पर 'वाज् इ' होने पर प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा में तिप्, शप्, गुण, एकार अयादेश होने पर 'वाजयति' यह रूप सिद्ध होता है, पक्ष में वाजयते यह भी।

ण्यन्त स्थल पर कर्तृभिप्राये क्रियाफले णिचश्च (१.३.७४) इस सूत्र से आत्मनेपद सिद्ध होता है। किन्तु 'शेषात् कर्तरि परस्मैपदम्' (१.३.७८) इस सूत्र से कर्त्ता का अभिप्राय न होने पर भी कियाफल में परस्मैपद प्राप्त होने पर वहाँ भी आत्मनेपद विधान हो, इसलिए यह योग आरम्भ करते हैं -

24.10 लियः सम्माननशालीनीकरणयोश्च (७१.३.७०)

सूत्रार्थ - पूजाभिभवञ्चना अर्थों में ण्यन्त लिङ् और लिय् से आत्मनेपद हो, अकर्तृक फल होने पर।

सूत्रव्याख्या - इस विधि सूत्र में तीन पद हैं। लियः (५/१) सम्मानन-शालीनकरणयोः (७/१) च - (अव्यय) यह सूत्र गत पदों का विच्छेद हैं। सम्माननं च शालीनी करणं च सम्माननशालीनीकरणे इस प्रकार इतरेतरद्वन्द्व समास हुआ। षष्ठी विभक्ति में सम्माननशालीनीकरणयोः हुआ। 'अनुदात्तङित आत्मनेपदम्' (१.३१.१) से आत्मनेपदं इस पद की अनुवृत्ति होती है, णेरणौ यत्कर्म णौ चेत् स कर्तानाध्याने (१.३.७६) इस सूत्र से 'णौ' इस पद की अनुवृत्ति होती है। चकार से गृधिवञ्च्योः प्रलम्भने (१.३.६९) यहाँ से प्रलम्भने इसका अनुकर्षण होता है, 'लियः' इससे ली और लिङ् धातु का ग्रहण होता है। यहाँ सम्मान अर्थात् पूजा, शालीनीकरण अर्थात् अभिभव, प्रलम्भन अर्थात् वञ्चन। इस प्रकार पूजाभिभवञ्चना, अर्थों में ण्यन्त लिय का आत्मनेपद हो अकर्तृक फल होने पर भी। इस प्रकार सूत्र से आत्मनेपद विधान किया जाता है।

उदाहरण- जटाभिः लापयते।

सूत्रार्थसमन्वय- 'प्रलम्भनाभिभवपूजासु लियो नित्यमात्त्वमशिति वाच्य इस वार्तिक से ली धातु से पूजार्थ में नित्य आत्व तथा णिच् परे होने पर पुक् आगम होने पर 'लापि' इस अवस्था में णिचश्च (१.३.७४) इससे उभयपद में प्राप्त होने पर उसको बाँधकर लियः सम्माननशालीनीकरणयोश्च इसके योग से केवल आत्मनेपद में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में लट् लकार में त प्रत्यय शप्, गुण, एकार तथा अयादेश होने पर लापयते यह रूप सिद्ध अभिभव अर्थ में - श्येनो वर्तिकाम् उल्लापयते, अभिभव करता है, इस अर्थ में प्रलम्भनार्थ - बालम् उल्लापयते, वञ्चयति (ठगता है) इस अर्थ में।

24.11 लीलोर्नुग्लुकावन्यतरस्यां स्नेहनिपातेन (७.३.३९)

सूत्रार्थ – स्नेह द्रव अर्थ में 'ली तथा ला' से क्रमशः नुग्लुक् आगम होता है णिच् परे।

सूत्रव्याख्या – इस विधि सूत्र में चार पद हैं। लीलोः (६/२), नुग्लुको (९/२) अन्यतरस्याम् (सप्तमी विभक्ति प्रतिरूपक – अव्यय), स्नेहनिपातेन (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। 'ली च लाश्च' इतरेतरयोगद्वन्द्व होने पर लीलौ षष्ठी द्विवचन में लीलोः। स्नेहस्य निपातनम् स्नेहनिपातनम् यहा षष्ठी तत्पुरुष समास है। अर्तिह्री (७.३.३६) इसके योग से 'णौ' इसकी अनुवृत्ति होती है, अङ्गस्य (६.४.९) अधिकार। इस प्रकार सुत्रार्थ – स्नेह द्रव अर्थ में 'ली' इसके तथा 'ला' इसके अङ्ग को यथासंख्य नुगागम और लुगागम होता है णिच् परे, रहते। नुक् लुक् दोनों स्थानों पर भी ककार इत्संज्ञक है, उकार उच्चारणार्थक है। अतः क्रमशः न् ल् ही शेष रहते है। इस प्रकार इस सूत्र से नुग्लुक् आगम का विधान होता है।

उदाहरण – विलीनयति, विलाययति। विलालयति विलापयति वा घृतम् यहाँ नि उपसर्गपूर्वक ली धातु विभाषा लीयतेः (६.१.५१) इस सूत्र से विकल्प से आत्व होता है, इस पक्ष में विपूर्वक ली धातु से हेतुमति च (३.१.२६) इसके योग से णिच् पर रहते आत्त्व होने पर 'लीलोर्नुग्लुकावन्यतरस्यां स्नेहनिपातने (७.३.३९) इसके योग से लुक् होने पर 'विलालि' अवस्था होने पर तिप्, शप्, गुण, एकार, अयादेश होने पर विलालयति – विलालयते रूप होता है आत्व के अभाव पक्ष में तो नुगागम होने पर विलीनयति – विलीनयते रूप सिद्ध होता है।

स्नेहनिपातन अर्थ से भिन्न अर्थ में तो नग्लुक् नहीं होता है अपितु पुगागम होता है। इस प्रकार विभाषा लीयतेः (६.१.५१) इस सूत्र से आत्त्व विकल्प से होने पर अर्तिह्री (७.३.३६) इसके योग से पुक् होने पर 'वि-लापि' इसकी धातुसंज्ञा होने पर विलापयति – विलापयते रूप सिद्ध होता है। किन्तु आत्व के अभाव पक्ष में णिच् परे 'ली' इसके ईकार का अचो ञ्णिति (७.२.११५) इस सूत्र से वृद्धि में ऐकार आदेश होने तथा अयादेश होने पर 'वि-लायि' इसकी धातुसंज्ञा होने पर विलाययति – विलाययते यह रूप सिद्ध होता है।

पाठगत प्रश्न 24.3

1. श्यन्तं प्रेरयति इस अर्थ में क्या रूप होता है?
2. लियःसम्माननशालीनकरणोयश्च इस सूत्र से किसका विधान होता है?
3. बालमुल्लापयते इसका क्या अर्थ है?
4. श्यनो वर्तिकामुल्लापयते इसका क्या अर्थ है?
5. लीलार्नुग्लकारवन्यतरस्यां स्नेहनिपातने यह शास्त्र व्याख्यान के अवसर में सम्पूर्ण रूप से कितने रुपों को प्रदर्शित करता है?
6. 'वाजयति' यहाँ मूल धातु क्या है और णिजन्त धातु क्या है?

ण्यन्त धातुओं से कर्तृऽभिप्रायक्रियाफल में णिचश्च (१.३.७४) इस सूत्र के द्वारा आत्मनेपद सिद्ध होने पर अकर्तृऽभिप्राय क्रियाफल में भी आत्मनेपद होता है न कि परस्मैपद। इस नियम के लिए यह सूत्र आरम्भ करते है -

24.12 भीस्म्योर्हेतुभये (१.३.३८)

सूत्रार्थ- ण्यन्त भी और स्मि धातुओं से आत्मनेपद होता है, यदि प्रयोजक भयस्मय गम्यमान हो।

सूत्रव्याख्या - यह विधि सूत्र दो पदों की है। भीस्म्योः (६/२), हेतुभये (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद हैं। भीश्च स्मिश्च भीस्मी, तयोः भीस्म्योः। 'हेतोः भयम्' यह पञ्चमी तत्पुरुष में हेतुभयम्, सप्तमी मे हेतुभये। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् (१.३.९२) इससे आत्मनेपद की अनुवृत्ति होती हैं, णेरणौ यत्कर्म णौ चेत् स कर्तृध्याने (१.३.६७) इससे णेः इसकी अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार पूर्वोक्त सूत्रार्थ फलित होता है। सूत्र में भय ग्रहण धातु के अर्थ के उपलक्षण के लिए है। उसके द्वारा भय शब्द से आश्चर्य अर्थ का भी ग्रहण होता है और इस सूत्र से आत्मनेपद का विधान होता है।

उदाहरण - मुण्डो भापयते।

सूत्रार्थसमन्वय - बिभ्यन्तं प्रेरयति इस अर्थ में है हेतुमति च (३.१.२६) इस सूत्र से 'भी' धातु से णिच् परे होने पर 'भी इ' यह स्थिति होने पर बिभेतेर्हेतुभये (६.१.५६) इसके योग से धातु के ईकार के स्थान पर विकल्प से आकार आदेश होने पर 'भा इ' होने पर अर्तिह्री. (७.३.६) इसके योग से पुगागम। होने पर 'भापि' होने पर कर्तृऽभिप्राय में क्रियाफल होने पर आत्मनेपद प्राप्त हुआ इसके अतिरिक्त अकर्तृऽभिप्राय में कियाफल होने पर परस्मैपद प्राप्त हआ। दोनों की प्राप्ति यहाँ होने पर भी आत्मनेपद विधान विधान हुआ भीस्म्योर्हेतुभये (१.३.६८) इस योग से। इस प्रकार 'भापि' इससे लट् लकार में प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा मे तिप्, शप्, गुण, अयादेश होकर भापयते यह रूप होता है। जब 'बिभतेर्हेतुभये' (६.१.५६) इस से आकारादेश नहीं होता है, उस पक्ष में अग्रिम सूत्र आरम्भ करते है।

24.13 भियो हेतुभये षुक् (७.३.४०)

सूत्रार्थ - ईकारान्त भिय् का षुक् आगम हो णि परे हेतुभयार्थ में।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र तीन पदों का है। भियः (६/१) हेतुभये (७/१) षुक् (१/१) सूत्रगत पदों का विच्छेद है। अर्तिह्री. (७.३.३६) यह इस सूत्र से 'णौ' का अनुवर्तन होता है। 'भी ई' यहाँ ईकार प्रश्लिष्ट होता है। इस प्रकार ईकारान्त अवस्था में स्थित भी धातु से षुगागम होता है, णिच् प्रत्यय परे रहते। यह सूत्र अचोञ्णिति (७.२.११५) इस सूत्र का बाधक है। यह सूत्र 'भी' धातु को आत्तावस्था में प्रवर्तित नहीं करता है। और इस तरह प्रकृत सूत्र से षुगागम का विधान होता है।

उदाहरण - भीषयते

टिप्पणियाँ

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार हेतु भय अर्थ में गम्यमान होने पर भी धातु से 'हेतुमति च' से णिच् होने पर 'भी इ' होने पर प्राप्तवृद्धि को बाधकर 'भियोहेतुभये षुक्' इससे षुक् होने पर 'भीषि' यह हुआ। इसके पश्चात् भीस्म्योर्हेतुभये (१.३.६८) इससे कर्तृऽभिप्राय या अकर्तृऽभिप्राय क्रियाफल होने पर आत्मनेपद होता है, उससे 'भीषि' से आत्मनेपद प्रत्यय होने पर प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा में त प्रत्यय शप्, गुण, एकार, अयादेश होने पर टित् आत्मनेपदानां टेरे (३.४.७९) इस सूत्र से टिका एत्व होने पर 'भीषयते' यह रूप होता है। यदि प्रयोजन से भय प्रतीत नहीं होता है, तब आत्मनेपद नहीं होता है, न आत्व और न ही षुगागम। आत्वाभाव में पुक् भी नहीं होता है। 'भी इ' स्थिति होने पर तिप्, शप्, वृद्धि, अयोदश होकर 'भाययति' यह सिद्ध होता है। इस क्रम से तीन रूप सिद्ध होते है।

24.14 नित्यं स्मयतेः (६.१.५७)

सूत्रार्थ – स्मि धातु के एच् को नित्य आकार आदेश हो णिच् प्रत्यय पर रहते।

सूत्रार्थव्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों का है। नित्यम् (१/१) स्मयतेः (६/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। आदे च उपदेशेऽशिति (६.१.४५) इससे आत् एच् इन दोनों की अनुवृत्ति होती है। चिस्फुरोर्णौ (६.१.५४) यहाँ से णौ इसकी तथा बिभेतेर्हेतुभये (६.१.५६) यहाँ से हेतुभये इसकी अनुवृत्ति होती है। और वह हेतुभयशब्द हेतुस्मय अर्थ का भी उपलक्षण है। उसके अनुसार 'नित्यं स्मयतेः' (६.९.५७) यहाँ स्मि धातु होने से हेतुभये इस शब्द का हेतुस्मये यह अर्थ होता है। क्योंकि स्मि धातु का भय अर्थ होना संभव नहीं है। अतः स्मि धातु से एच् के स्थान पर नित्य आकारादेश होता है णिच् प्रत्यय परे रहते।

विभाषा लीयतेः (६.१.५१) यहाँ से विभाषा पद की अनुवृत्ति न हो, इसलिए, इस सूत्र में नित्य पद को लाया गया है। बिभेतेर्हेतुभये (६.१.५६) नित्यं स्मयतेः (६.१.५१) इन दोनों सूत्रों से विधीयमान आत्व को 'भीस्म्योर्हेतुभये' (१.३.६८) इस सूत्र से आत्मनेपद विधीयमान है यदि प्रयोजक से भय गम्य हो, तब ही होता है ऐसा स्मरण रखना चाहिए।

उदाहरण – जटिलो विस्मायते। विस्मयमानं पश्यति इस अर्थ में वि पूर्वक स्मिङ् ईषद्धसने इस धातु से णिच् परे रहते वि स्मि इ होने पर धातु के इकार की अचो ञ्णिति (७.२.११५) इससे वृद्धि एकार होने अयादेश होने पर नित्यं स्मयतेः (६.१.५७) इससे नित्य आकारादेश होने पर 'वि स्मा इ' यह हुआ। उसके बाद आकारान्त होने से अर्तिह्री. इससे पुगामम होने पर 'वि स्मापि' यह होने पर भीस्म्योर्हेतुभये (१.३.६८) इससे नित्य आत्मनेपद होने पर प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा में त प्रत्यय, शप्, गुण, एकार होने पर विस्मापयते यह रूप सिद्ध होता है। और यदि हेतु (प्रयोजक) से भय गम्य नहीं होता है, तो आत्मनेपद नित्य नहीं होता है, आत्व का अभाव होने पर पुगागम नहीं होता है, उससे स्माययति, स्माययते, यह प्रयोग होता है।

सिधु संराद्धौ यह दिवादिगणीय धातु से सिद्ध करने के लिए प्रेरित करता है, इस अर्थ में णिच् परे होने पर 'सिध् इ' इस स्थिति में उपधा गुण होने पर 'सेध् इ' होने पर अग्रिम सूत्र आरम्भ करते हैं।

24.15 सिध्यतेरपारलौकिके (६.१.४९)

सूत्रार्थ – इहलौकिक अर्थ में विद्यमान सिध् धातु के एच् के स्थान पर आकार आदेश हो णिच् प्रत्यय पर रहते।

सूत्रव्याख्या – यह विधि सूत्र दो पदों का है। सिध्यते: (६/१) अपारलौकिके (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। आदेच उपदेशेऽशिति (६.१.४५) यहाँ से आत् एच: इन दोनों की और क्रीङ्जीनांणौ इत्यत यहाँ से णौ' इसकी अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार परलोक असम्बन्ध अर्थ में विद्यमान होने पर सिध् धातु के एच् के स्थान पर आकारादेश होता है णिच् परे रहते यह सूत्र का अर्थ है। इस सूत्र से आत्व का विधान होता है।

उदाहरण – अन्नं साधयति निष्पादन करती है, इस अर्थ में। सूत्रार्थसमन्वय – और इस प्रकार 'सेध् इ' यहाँ उपधाभूत एकार के स्थान पर आकार आदेश होता है अपारलौकिक के गम्यमान होने से सिध्यतेपारलौकिके इस सूत्र से। और इस प्रकार 'सधि' इस की 'सनाद्यन्ता धातव: (३.१.३२) इससे धातुसंज्ञा होने पर लट् लकार में प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा मैं त प्रत्यय शप्, गुण, एकार, अयादेश होने पर साधयते तिप् होने पर साधयति यह रूप सिद्ध होता है। और यदि पारलौकिक अर्थ की प्रतीति होती है तब इस सूत्र की प्रतीति नहीं होती है। तब सेध्यते यह रूप होता है और प्रयोग इस प्रकार होता है – तापस: सिध्यति तत्त्वं निश्चिनोति। तं प्रेरयति सेध यति तापसं तप:।

दुष वैकृत्ये इस दिवादिगण की धातु, से दुष्यन्तं प्रेरयति इस अर्थ में हेतुमति च (३.१.२६) इस से णिच् परे रहते दुष् इ होने पर पुगन्तलघूपधस्य च (७। ८। ८६) इससे लघूपध गुण प्राप्त होने पर यह सूत्र आरम्भ होता है –

24.16 दोषो णौ (१६। ५। १०)

सूत्रार्थ – दुष् धातु की उपधा के स्थान पर ऊत् आदेश हो णिच् प्रत्यय परे रहते

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों वाला है।दोष: (६। १) णौ (७। १) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। दोष: दुष् धातु के लघूपध के गुण होने का निर्देश है। उदूपधाया गेह: (६.४.८९) यहां से उत् उपधाया: इन दोनों की अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार सूत्रार्थ सिद्ध होता है। इस सूत्र से उदादेश का विधान होता है

उदाहरण – दूषयते, दूषयति

सूत्रार्थ समन्वय – इस प्रकार दुष् धातु से णिच् परे रहते लघूपधगुण प्राप्त होने प्राप्त होने पर उसको बाँधकर 'दोषो णौ' इस सूत्र से उपधा भूत ह्रस्व उकार के स्थान पर दीर्घ उकार होने पर 'दूषि' होने पर लिप्, शप्, गुण, एकार, अयादेश होने पर दूषयति तथा त प्रत्यय होने पर दूषयते यह रूपद्वय सिद्ध होते हैं।

टिप्पणियाँ

चित्तविराग अर्थ में तो यह ऊदादेश विकल्प से होता है। इसलिए चितं दूषयति दोषयति वा काम: यहाँ तो चित्तविराग अर्थ है हेतो: वा चित्तविरागे (६.४.९१) इससे विकल्प से दुष्धातु की उपधा के स्थान उ के स्थान पर ऊन यह दीर्घ आदेश होने पर दूषयति यह रूप सिद्ध होता है जब ऊदादेश नहीं हो तब दुष् धातु से णिच् पर रहते दुष् इ होने पर गुण 'ओ' तिप्, शप्, गुण, अयादेश, होने पर दोषयति यह रूप होता है इस प्रकार सकल रूप से दो रूप सिद्ध होते हैं।

अदादिगण की इण् गतौ इस धातु से अयन्तं प्रेरयति इस अर्थ में णिच् परे रहते इ इ होने पर यह सूत्र आरम्भ किया जाता है –

24.17 णौ गमिरबोधने॥ (२.४.४६)

सूत्रार्थ – अबोधनार्थ गम्यमान होने पर इण् धातु के स्थान पर 'गमि' यह आदेश होता है णिच् परे रहते।

सूत्र व्याख्या – यह विधि सूत्र तीन पदों का है। णौ (७/१) गमि: (१/१) अबोधने (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। न बोधनम् इति नञ् तत्पुरुष में अबोधनम्, सप्तमी में अबोधने। इणो गा लुङि (२.४.४५) यहाँ से इण: इस पद की अनुवृत्ति होती है। उससे सूत्र का अर्थ सिद्ध होता है। गमि का इकार उच्चारणार्थ है, गम् मात्र शेष रहता है। बोधन अर्थ में यह आदेश नहीं होता है, यह ध्यान योग्य है। इस प्रकार इस सूत्र से गमि यह आदेश होता है।

उदाहरण – गमयति

सूत्रार्थसमन्वय – इस प्रकार इण् धातु से णिच् परे रहते णौ गमिरबोधने इस सूत्र से गमि यह आदेश होने एवं अनुबन्ध लोप होने पर गम् इ हुआ। तत्पश्चात् अत उपधाया: (७.२.११६) इस से उपधाभूत अकार की वृद्धि होने पर 'जनीजृष्क्नसुरञ्जोऽयन्ताश्च' इस गणसूत्र से मित्संज्ञा होने पर या मिद्भाव होने पर मितां ह्रस्व: (६.४.९२) इस से उपधाभूत आकार का ह्रस्व होने पर 'गमि' इसकी ही सनाद्यन्ता धातव: (३.१.३२) इस सूत्र से धातु संज्ञा होने पर तिप्, शप्, गुण, एकार अयादेश होने पर गमयति यह रूप सिद्ध होता है, पक्ष में गमयते यह भी होता है।

बोधन अर्थ में तो यह आदेश नहीं होता है, उससे 'प्रत्यायति' यह रूप बनता है, पक्ष में प्रत्याययते यह भी होता है।

नित्य अधिपूर्वक इङ् अध्ययने इस अदादिगण की धातु से अधीयमानं प्रेरयति इस अर्थ में हेतुमति च (३.१.२६) इससे णिच् परे रहते अधि इ इ स्थिति में यह अग्रिम सूत्र आरम्भ किया जाता है।

24.18 क्रीङ् जीनां णौ (६.१.४८)

सूत्रार्थ – क्री-इङ् जि धातुओं से एच् के स्थान पर आकार आदेश होता है। णिच् परे रहते।

सूत्रव्याख्या – यह विधिसूत्र दो पदों वाला है। क्रीङ्जीनाम् (६/३) णौ (७/१) यह सूत्रगत पदों का विच्छद है। 'क्रीश्च इङ् च जिश्च' इनका इतरेतरयोग द्वन्द्व होने पर क्रीङ्जयः षष्ठी में क्रीङ्जीनाम्। आदे च उपदेशेऽशिति (६.१.४५) इससे आत्, एचः इन दोनों पदों की अनुवृत्ति होती है। इस प्रकार सूत्रार्थ सिद्ध होता है।

उदाहरण – अध्यापयति

सूत्रव्याख्या – इस प्रकार अधिपूर्वक इङ् धातु से णिच् परे रहते अधि इ इ यह स्थति होने पर धातु के इकार की क्रीङ्जीनां णौ इस सूत्र से आत्व होने पर उपधि आ इ होने पर अर्तिह्री. इसके योग से पुगागम होने एवं अनुबन्ध लोप होने पर अधि आपि यह होने पर यण् होकर 'अध्यापि' समुदाय की सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) इस सूत्र से धातु संज्ञा में लट्, तिप्, शप्, गुण, एकार और अयादेश होने पर अध्यापयति यह रूप सिद्ध होता है, पक्ष में अध्यापयते यह भी यह भी रूप होता है।

इसी प्रकार कीणन्तं क्रयमाणं वा प्रेरयति इस अर्थ में डुक्रीञ् द्रव्यविनिमय इस धातु से णिच् पर रहने पर आत्व, पुगागम, तिप्, शप्, गुण ,एकार अयादेश होने पर जापयति यह रूप सिद्ध होता है, पक्ष में जापयते यह भी होता है।

आसानी से बोध के लिए यहाँ कुछ णिजन्त रूपों को लृट् और लृङ् लकार में निम्न तालिका के माध्यम से प्रदर्शित किया जा रहा है –

धातुः	ण्यन्तार्थः	सामान्यरूपाणि	णि.लटि रूपाणि	णि.लुङि.रूपाणि
अद्	खिलाना	अत्ति	आदयति	आदिदत्
कृ	कराना	करोति	कारयति	अचीकरत्
क्री	खरीदवाना	क्रीणाति	क्रापयति	अचिक्रपत्
क्रीड्	खेलाना	क्रीडति	क्रीडयति	अचिक्रीडत्
खाद्	खिलाना	खादति	खादयति	अचीखदत्
गम्	भिजवाना	गच्छति	गमयति	अजीगमत्
ग्रह्	ग्रहण करवाना	गृह्णाति	ग्राहयति	अजिग्रहत्
चल्	चलाना	चलति	चालयति	अचीचलत्
जन्	पैदा करना	जायते	जनयति	अजीजनत्
जीव्	जिलाना	जीवति	जीवयति	अजिजीवत्
ज्ञा	बोध करना	जानाति	ज्ञापयति	अजिज्ञपत्

तुष्	प्रसन्न करना	तुष्यति	तोषयति	अतूतुषत्
त्यज्	छुडाना	त्यजति	त्याजयति	अतित्यजत्
दा	दिलवाना	ददाति	दापयति	अदीदपत्
दृश्	दिखाना	पश्यति	दर्शयति	अदीदृशत्
नम्	झुकाना	नमति	नामयति	अनीनमत्
नश्	नष्ट कराना	नश्यति	नाशयति	अनीनशत्
पच्	पकवाना	पचति	पाचयति	अपीपचत्
पठ्	पढ़ाना	पठति	पाठयति	अपीपठत्
पा	पिलाना	पिबति	पाययति	अपीपबत्
पुष्	पुष्ट करना	पुष्यति	पोषयति	अपूपुषत्
बोध्	बोध कराना	बुध्यति	बोधयति	अबूबुधत्
मिल्	मिलाना	मिलति	मेलयति	अमीमिलत्
मुद्	प्रसन्न करना	मोदते	मोदयति	अमूमुदत्
यज्	यज्ञ करवाना	यजति	याजयति	अयीयजत्
युज्	मिलवाना	युनक्ति	योजयति	अयूयुजत्
रुद्	रुलाना	रोदिति	रोदयति	अरूरुदत्
लभ्	प्राप्त कराना	लभते	लम्भयति	अललम्भत्
लिख्	लिखाना	लिखति	लेखयति	अलीलिखत्
वच्	कहलवाना	वक्ति	वाचयति	अवीवचत्
वस्	वास कराना	वसति	वासयति	अवीवसत्
वृध्	बढाना	वर्धते	वर्धयति	अवीवृधत्
शी	सुलाना	शेते	शाययति	अशीशयत्
श्रु	सुनाना	श्रृणोति	श्रावयति	अशुश्रवत्
स्मृ	स्मरण करना	स्मरति	स्मारयति	असस्मरत्
हन्	मरवाना	हन्ति	घातयति	अजीघतत्
हस्	हसाना	हसति	हासयति	अजीहसत्

पाठगत प्रश्न 24.4

1. भापयते यहाँ आत्व कहाँ से हुआ?
2. सिध्यतेरपारलौकिके इसका उदाहरण क्या है?
3. दुष्यन्तं प्रेरयति इस अर्थ में णिच् परे होने पर कौन सा रूप बनाता है?
4. इण् गतौ धातु से अबोधन और बोधन अर्थ में क्या रूप होता है, णिच् परे रहते?
5. अधीयमानं प्रेरयति इस अर्थ में क्या रूप होता है?
6. 'कापयति' इसका क्या अर्थ है, लिखिए।
7. नित्यं स्मयतेः (६.१.५७) इसका उदाहरण कौन सा है?
8. विस्माययति इत्यादि में आत्त्वं कहाँ नित्य नहीं है?

पाठ का सार

यहाँ संक्षिप्त रूप से इस पाठ के मुख्य विषय को उपस्थापित करते हैं। भ्वादि से चुरादि तक जो धातु हैं उनका भूवादयो धातवः (१.३.१) इस सूत्र से धातु संज्ञा होती है। वे धातुएँ दसगणों में विभक्त है इस कारण दसगणीय धातुएं कहलाती है। उन्ही धातुओं से प्रेरणार्थ में प्रत्यय होने पर उन नवीन शब्दों की धातुसंज्ञा सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) इससे होती है इस भिन्नता को सम्यक् रूप से समझना उचित है। और दूसरा णिच् प्रत्यय स्वार्थ एवं प्रेरणा भेद से दो प्रकार का होता है। यहाँ तो स्वार्थक णिच् चर्चा का विषय नहीं है, अपि तु प्रेरणार्थक ही है, यह भी सम्यक् रूप से ज्ञात करने योग्य है। और कहीं णिच् प्रत्यय नित्य ही होता है यह नियम नहीं है। अतः पक्ष में वाक्य भी साधु होता है। जैसे - पठ् धातु से णिच् प्रत्यय होने पर पाठयति यह पद ठीक है, वैसे ही पठितुं प्रेरयति यह वाक्य भी ठीक है। इस पाठ के आरम्भ में णिच् प्रत्ययान्त रूप को कैसे निष्पादित किया जाता है, इसको सूत्र सहित प्रदर्शित करके णिजन्त धातु से लुङ् लकार में विशेष के लिए ओः पुयण्जपरे इसकी व्याख्या की गई है। तत्पश्चात् पुक्-युक्-जुक् आगमविधायक सूत्र सोदाहरण व्याख्यायित किए गए हैं। उसके बाद जिच् परे रहने पर कभी धातु की उपधा का दीर्घ होता है, अथवा कभी उपधा का ह्रस्व होता और कभी उपधा का ऊत्व होता है। इत्यादि विषय उन-उन सूत्रों के उन-उन उदाहरणों में प्रदर्शित किए गए हैं। तत्पश्चात् ली-ला धातुओं के विषय में भी-स्म धातुओं के विषय में दीर्घचर्चा की गई है।

तत्पश्चात् साधयति, दूषयति, अध्यापयति, वाजयति, गमयति हमारे व्यवहार में आने वाले इन शब्दों की प्रक्रिया भी तत्तत् सूत्रों में प्रदर्शित की गई हैं।

पाठांत प्रश्न

1. भावयति इस रूप को सिद्ध कीजिए।
2. तनोर्यकि इस सूत्र को सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
3. ओः पुयण्जपरे इसकी व्याख्या कीजिए।
4. णौ च संचङो शास्त्र की व्याख्या कीजिए।
5. कीङ् जीनां णौ इसके उदाहरणों की प्रक्रिया प्रदर्शित कीजिए।
6. गमयति इस रूप की ससूत्र व्याख्या कीजिए।
7. भी धातु रूप विषय में टिप्पणी लिखिए।
8. सिध्यति इस रूप को सिद्ध कीजिए।
9. 'दोषो णौ' इस सूत्र में स्थित उदाहरणों का विशदीकरण कीजिए।
10. पाठ प्रदर्शित लीला धातु के रूप विषय में टिप्पणी लिखिए।
11. स्तम्भों में स्थित परस्पर सम्बद्धों का मिलान करो –

क-स्तम्भः		ख-स्तम्भः	
१.	तत्प्रयोजको हेतुश्च	(a)	उपधाह्रस्वः
२.	क्रीङ्जीनां णौ	(b)	तायते
३.	प्रत्याययति	(c)	बोधयति
४.	भीस्म्योर्हेतुभये	(d)	उभयपदविधानम्
५.	शाच्छासाह्वाव्यावेपां युक्	(e)	शाययति
६.	शालीनीकरणम्	(f)	उपधावृद्धिनिषेधः
७.	नोदात्तोपदेशस्य मान्तस्यानाचामेः	(g)	अभिभवः
८.	तनोर्यकि	(h)	आत्मनेपदम्
९.	मितां ह्रस्वः	(i)	अध्यापयति
१०.	णिचश्च	(j)	कर्तृसंज्ञा

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

24.1

1. हां, होता है।
2. कर्ता के प्रयोजक की।
3. प्रेरणा अर्थ में।
4. हां, होता है।
5. प्रयोजक कर्ता का व्यापार।
6. परस्मैपदात्मनेपद विधान होता है।
7. सन् परे रहते जो अङ्ग है, उसके अवयवाभ्यास के उकार का इत् हो पवर्ग यण् जकार और अवर्ण परे रहते।
8. अबीभवत्

24.2

1. चङ् परक णि परे रहते स्था धातु की उपधा का इकार अदेश होता है।
2. पुगागम
3. मितां ह्रस्वः।
4. णि परे रहते घटादि और ज्ञपादि की उपधा का ह्रस्व है।
5. ज्ञप मिच्च इस निर्देश से।

24.3

1. शाययति, शाययते
2. आत्मनेपद
3. बालं वञ्चयति
4. श्येनः वर्तिकाम् अभिभवति।
5. अष्ट
6. मूलधातु - ओ वै शोषणे, णिजन्त धातु - वाजि

टिप्पणियाँ

24.4

1. विभेते हेतुभये (६.१.५६)
2. अन्नं साधयति, निष्पादयतीत्यर्थः
3. दूषयति, दोषयते
4. अबोधन अर्थ में – गमयति, बोधन अर्थ में प्रत्याययति।
5. अध्यापयति
6. क्रीणन्तं क्रममाणं वा प्रेरयति
7. जटिलो विस्मायते
8. हेतु से भय गम्य न होने के कारण।

॥ चौबीसवां पाठ समाप्त॥